International Journal of New Media Studies (IJNMS), ISSN: 2394-4331
Volume 10 Issue 1, January-June, 2023, Impact Factor: 7.786

विजय 'विभोर' की कहानियों में सामाजिक सरोकार

शमशेर सिंह

एम०ए०, एम०फिल० (हिन्दी), नेट, गांव पौली, तहसील जुलाना, जिला जींद

साहित्य मूलतः एक सामाजिक वस्तु है। व्यक्ति समाज की एक इकाई है। व्यक्ति और उसके परिवेश एवं युग की घटनाओं का साहित्य में चित्रित होना स्वाभाविक है। साहित्य और समाज का अन्योन्याश्रित संबंध स्वतः सिद्ध है। साहित्य बदलती दुनिया का मात्र दर्पण नहीं है वरन् वह शांति, प्रगति तथा परस्पर स्नेह–सौहार्द के लिए भी कटिबद्ध है। वह कोरा सुधारक तथा उपदेशक भी नहीं है अपितु व्यवस्था परिवर्तन के लिए भी तत्पर रहता है। साहित्यकार समाज का सर्वाधिक संवेदनशील प्राणी होता है। वह अपने युग की परिस्थितियों, परिवेश एवं आसपास के वातावरण से आंदोलित तथा प्रेरित होकर ही रचनाकर्म में प्रवृत्त होता है। अतः वह सामाजिक सुख–दुःख की अनुभूतियों को ही अपनी रचनाओं में उकेरता है। साहित्यकारजब रचना संसार में डुबकी लगाने लगता है तो भूत, वर्तमान और भविष्य तीनों कालों की अनुभूति उसके मन–मस्तिष्क में पूर्णतः सक्रिय हो उठती है और इन्हीं से प्रेरित होकर वह ऐसे साहित्य की रचना करता है जिसकी प्रासंगिकता तीनों कालों में समान हो तथा वर्तमान तथा भविष्य के लिए जीवन का संदेश भी हो।

हिंदी साहित्य भी विवेच्य विषय से अछूता नहीं है। माँ भारती के सहस्रों सपूतों ने अपने रचना कर्म से हिंदी साहित्याकाश को आलोकित किया है। मुंशी प्रेमचंद का साहित्य व्यक्ति और उसके परिवेश के चित्रण का एक उत्कृष्ट उदाहरण कहा जा सकता है। समकालीन हिंदी लेखन में विजय 'विभोर' के अवदान की अपनी एक विशिष्ट पहचान है। वे बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे। उनकी रचनाएँ निश्चय ही हिंदी साहित्य की अमूल्य धरोहर है। एक कथाकार के रूप में अपनी पहचान स्थापित करने वाले विजय 'विभोर' जी का जन्म 1972 ई० सालारपुर माजरा, जिला सोनीपत (हरियाणा) में श्री करण सिंह के घर में हुआ था। इनकी जन्मदात्री माता का नाम श्रीमती संतरा देवी था तथा पालक माता श्रीमती दर्शना देवी थी। इनका विवाह आशा रानी के साथ 1998 ई० में सोनीपत में हुआ।

'विभोर' जी पारिवारिक परिस्थितियों के कारण विश्वविद्यालय की शिक्षा ग्रहण नहीं कर सके। इन्होंने अपने जीवन में शिक्षा की कमी को शादी के समय दसवीं पास करके आई अपनी पत्नी के माध्यम से पूरा किया। विजय 'विभोर' जी ने कुल तीन कहानी संग्रहों की रचना की –

1. अहंकार के अंकुर
2. देख कबीरा हँसा
3. फूस का महल

इसके अतिरिक्त इन्होंने टेंशन, हमारा देश हमारा घर, धारे की बहू, संसार सुखों का घर है, आदि शॉर्ट फिल्मों में अभिनय भी किया। इन्हें अनेक साहित्यिक मंचों एवं संस्थाओं द्वारा अनेक सम्मान पत्रों एवं पुरस्कारों से सम्मानित भी किया गया। 9 अगस्त 2021 को साहित्याकाश का यह उज्ज्वल नक्षत्र सदा–सदा के लिए विलीन हो गया।

साहित्य के सामाजिक सरोकार के विषय के अन्तर्गत साहित्य और समाज दो क्षेत्र हैं और सरोकार एक ऐसा कारक है जो इन दोनों क्षेत्रों को आपस में जोड़ता है। सरोकार शब्द अँग्रेजी के 'कॉन्सर्न' अथवा 'कॉन्सर्नमेंट' का अनुवाद है, जिसे संबंधशीलता, हस्तक्षेप, चिंता आदि अर्थों में ग्रहण किया जाता है। एक अन्य अर्थ के अनुसार सरोकार से अभिप्राय है – वास्ता, परस्पर व्यवहार, मानवीय सरोकार। इस दृष्टि से हम कह सकते हैं कि साहित्य और समाज का संबंध स्थापित करने वाले और साहित्यकार के माध्यम साहित्य में समाहित होकर समाज का मार्गदर्शन करने वाले व मनुष्य की विचारधारा को नई दिशा देने वाले कारक सामाजिक सरोकार कहे जा सकते हैं। कोई भी रचना सामाजिक सरोकारों से सम्पन्न तब होती है, जब वह समाज के चौतरफा हितों को अपने भीतर समाहित करके आगे बढ़ाती है। कुल मिलाकर कहा जा सकता है कि सामाजिक सरोकार वे सामाजिक क्रिया–कलाप हैं जो व्यक्ति के स्तर से शुरू होकर राष्ट्रीय स्तर पर समाज को ले जाते हैं। सामाजिक सरोकार के कारण ही व्यक्ति अपने स्वभाव और व्यवहार में बदलाव लाता है।

विजय 'विभोर' की कहानियों में सामाजिक सरोकार
दौलत का पुजारी

प्रस्तुत कहानी में दर्शाया गया है कि किस प्रकार मनुष्य दौलत के अहंकार में अपने रिश्ते–नातों को भी भूल जाता है। ललित अपने चाचा धर्मराज के पास कुछ पैसों के लिए आता है, क्योंकि उसकी माँ सख्त बीमार थी। धर्मराज उसे पाँच रूपये सैंकड़ा ब्याज पर दो लाख रूपये देता है। वह यह भी नहीं सोचता कि यह मेरे सगे भाई का बेटा है। धर्मराज का बेटा रामराज इस बात पर अपने पिता का विरोध करता है, लेकिन धर्मराज उसे समझाते हुए कहते हैं – ''धंधे में कोई रिश्ता–नाता नहीं होता। गुणीजन भी कह गये हैं – घोड़ा घास से यारी करेगा तो खाएगा क्या? हिसाब–हिसाब होता है।''[1] रामराज विरोध भरे स्वर में बोला – ''लेकिन जो आपने किया है वो हिसाब नहीं बेहिसाब है।''[2] ललित की माँ की जान तो बच जाती है लेकिन धर्मराज की हालत बहुत खराब हो जाती है। इतना ही नहीं लक्ष्मी–पूजन में धर्मराज के सभी रूपये जलकर राख हो जाते हैं। इसीलिए तो कहा गया है – ''जैसी करनी वैसी भरनी।''

अहंकार के अंकुर

इस कहानी में यह दर्शाया गया है कि अहंकार कैसे उत्पन्न होता है और उसका समाधान कैसे किया जाता है। पति–पत्नी राजेश और रजनी दोनों सरकारी नौकरी करते हैं। दोनों ने घर के काम आपस में बाँट रखे हैं ताकि एक दूसरे को कोई परेशानी न हो। एक दिन राकेश के पिताजी गाँव से शहर उनके घर पर आते हैं। रजनी यह सोचकर खाना नहीं बनाती कि आज तो खाना बनाने का दिन राजेश का है। यह बात राजेश को अच्छी नहीं लगती और वह रजनी को उसके घर छोड़कर आ जाता है। जब रजनी के पिता को इन सब बातों का पता चलता है तो वह रजनी पर बहुत गुस्सा होता है और रजनी के कान के नीचे एक जोर का तमाचा जड़ देता है और कहता है – ''लड़की तुम्हारे अंदर ये अहंकार के अंकुर कैसे पनप गये? ..... अरे! रामधन जी के स्थान पर यदि मैं तुम्हारे घर आता, तो क्या तुम खाना बनाने की अपनी बारी का इंतजार करती?''[3]

शुभचिंतक दुश्मन

प्रस्तुत कहानी के नायक इंदर को शराब पीने की आदत लगी हुई थी। इस आदत के कारण घर में रोज कलह होती रहती थी। इंदर अपने जीजा संयम का बहुत सम्मान करता था। उसके आने पर वह शराब को हाथ भी नहीं लगाता था। एक घटना ने इंदर के इस विश्वास को चकनाचूर कर दिया जब उसके जीजा जी ने शराब छुड़वाने की जगह यह कहा – ''अच्छे शराब की ब्रांड पियाकर, मुर्गे–शुर्गे खायाकर। दुनियादारी, माँ–बाप किसी भी फिकर नहीं करते। बच्चे चाहे पड़ौसी के घर से भीख माँगकर गुजारा करें, बीवी को चाहे पड़ौसी संभाले .. .. किसी की चिंता नहीं। तू सिर्फ अपने बारे में सोच, सिर्फ अपने बारे में, ... मौज ले। दुनिया जले तो जले, बच्चे भीख माँगे तो माँगे, चिंता नहीं।''[4]

उस कमरे से निकल कर संयम इंदर की पत्नी पूनम से कह गया – ''मैंने अपने तरीके से इंदर को समझा दिया है। इसका असर क्या होगा मुझे नहीं मालूम।''[5] इंदर कभी इतना बेचैन नहीं हुआ जितना कि आज संयम की बातें सुनकर हुआ। संयम के शब्द उसके कानों में गूँज रहे थे। वह विचारों में खोया जा रहा था ..... यह मेरा शुभचिंतक हैं या दुश्मन? ऐसी शिक्षा तो कोई दुश्मन ही देता है, जो शिक्षा मुझे संयम दे रहा था। न जाने कब उसके हाथ में उठाई बोतल फर्श पर दे मारी और कहा आज के बाद कभी भी शराब को हाथ नहीं लगाऊँगा। उस दिन के बाद इंदर ने कभी शराब नहीं पी। अब वह अपने बच्चों, माता–पिता और अपनी पत्नी पूनम का भरपूर ख्याल रखने लगा। इस घटना के बाद उसने न तो कभी संयम को आमंत्रित किया और न ही संयम उस दिन के बाद उसके घर आया। संयम ने विचित्र तरीके से इंदर के घर को बर्बाद होने से बचा लिया।

सच्ची कमाई

रामशरण भाटिया सरकारी विभाग में क्लर्क के पद पर आसीन हैं। उनका पद बड़ा मलाईदार है, किन्तु संस्कार कहें या ईमानदारी के कीटाणु कहें, वे पूरी ईमानदारी से इस पद पर लोगों की सेवा कर रहे थे। छोटे–बड़े लोगों का आना–जाना लगा रहता था। ईमानदारी और 'अतिथि देवो भवः' वाली तर्ज पर चलते हुए तनख्वाह का एक हिस्सा इसी चाय–पानी पर खर्च हो जाता था। पुत्र रंजन की

[1]अहंकार के अंकुर, पृष्ठ 25
[2]वही, पृष्ठ 26
[3]वही, पृष्ठ 43,44
[4]अंहकार के अंकुर, पृष्ठ 22
[5]वही, पृष्ठ 22

सभी ख्वाइशें पूरी न होती थी और वह अपने पिता रामशरण को बात–बात पर कोसता रहता था। दूसरी तरफ रंजन के दोस्त रमण का पिता भी उसी कार्यालय में लगभग उसी के समान पद पर कार्यरत था तथा खूब मलाई उड़ाता था। रमण का परिवार भौतिक सुख सुविधाओं से पूर्णतः सम्पन्न था। यह बात रंजन को और भी चुभती थी। एक बार रंजन अपने पिताजी से उनके परिचित परीक्षा नियंत्रक से थोड़ी मदद करने की सिफारिश लगवाने की बात कहते हैं तो पिताजी स्पष्ट मना कर देते हैं। परीक्षा में लाइनमैन यह जानकर कि वह भाटिया का बेटा है, उसका पूरा पेपर हल करवा देते हैं और कहते हैं कि मैं उनका बहुत सम्मान करता हूँ। परीक्षा भवन वाली घटना के बाद रंजन की आत्मग्लानि और पिता जी से सुबह हुए विवाद की यादें उसे धिक्कारती है। परीक्षा देकर घर आते ही पिताजी के ऑफिस से फोन आया कि रामशरण को दिल का दौरा पड़ गया उन्हें एक प्राईवेट अस्पताल में ले जाया गया है। अस्पताल में पहुँचते ही रामशरण ने रंजन से कहा – ''बेटा! मुझे माफ कर दे! मैं उमर भर तुम्हें रूपये का सुख नहीं दे पाया। .... मेरे पास पैसा है नहीं बेटा। इसलिए मुझे लगता है अब मेरे जीने का कोई महत्त्व नहीं बचा .....।'' [6] यह कहते–कहते रामशरण ने प्राण त्याग दिए। अस्पताल को एक लाख से अधिक का बिल देखकर रंजन पसीना पोंछने लगा तो बड़े डॉ० साहब ने उन्हें कहा – ''बेटा! आपको यह बिल भरने की कोई जरूरत नहीं है। भाटिया जी जैसे नेक इंसान से खर्चा लेकर मुझे नरक में नहीं जाना है। तुम तो भाई साहब के अंतिम संस्कार की कार्रवाई पूरी करो।''[7] रंजन हैरान था। जब वह अंतिम संस्कार के बाद टाल वाले के पास लकड़ियों का हिसाब करने गया तो उसने हिसाब में मात्र दस रूपये ही जोड़ रखे थे। टाल वाले ने रंजन के यह कहने पर कि – लकड़ियों को देखते हुए तो आपका हिसाब बहुत ज्यादा होना चाहिए था, उत्तर देते हुए कहा – ''बेटा जी! ये दस रूपये भी मैं इसलिए ले रहा हूँ ताकि तुम्हारे सम्मान को ठेस न पहुँचे। नहीं तो रामशरण जी के कर्जे को तो मैं कभी उतार ही नहीं सकता।''[8] समय बीतता गया। रंजन को नौकरी के लिए इंटरव्यू का दिन था। इस नौकरी के लिए 20–22 लाख रूपये देकर नौकरी लेने वालों की बातें उसे विचलित कर रही थी। उसकी माँ उसे समझाती थी कि तुम्हारे पिता ने रूपये नहीं कमाए हैं। यह बात उसकी समझ और विश्वास से परे थी। अब भी वह बार–बार पिताजी को कोसता था। इंटरव्यू कमेटी के सदस्यों को जब पता चला कि वह भाटिया जी का बेटा है तो उन्होंने भी उनकी ईमानदारी की सराहना की और कहा – 'रंजन जी! आप भाटिया जी के बेटे हो। उनके कुछ तो अच्छे संस्कार आपके अंदर होंगे ही। रंजन को नियुक्ति पत्र देते हुए सभी उनके उज्ज्वल भविष्य की कामना कर रहे थे। अब तो रंजन पर जैसे घड़ों पानी पड़ गया। अब उसकी समझ में आया कि माँ ने क्यों कहा था कि – 'तुम्हारे पिताजी ने बहुत बड़ा धन कमा रखा है। उन्होंने लोग कमा रखे हैं बेटा, जो तुम्हें नज़र नहीं आएगा।' रंजन ने मन में दृढ़ संकल्प किया कि वह भी अपने पिता जी के आचरण को अपनाकर उनका कर्ज उतारेगा।

तुम मेरी मंजिल नहीं

इस कहानी में एक विद्यार्थी की सोच का बहुत सुन्दर चित्रण है। आशुतोष नाम का विद्यार्थी बारहवीं कक्षा में द्वितीय श्रेणी में पास हुआ। द्वितीय श्रेणी में पास होने पर भी उसे महाविद्यालय में दाखिला मिल ही गया। वह एक आकर्षक युवक था। उसी के कॉलेज की गौरी नामक लड़की से उसकी मुलाकात हुई और मुलाकात कब प्यार में बदल गई, उन्हें पता भी नहीं चला। गौरी के साथ रहकर आशुतोष को अपनी गरीबी का अहसास होने लगा। वह गौरी के समकक्ष आने के लिए अब पढ़ाई में अधिक ध्यान देने लगा। आशुतोष ने स्नातक परीक्षा में पूरे महाविद्यालय में प्रथम स्थान प्राप्त किया और गौरी ने तृतीय। अब दोनों ने विश्वविद्यालय में प्रवेश लिया। एम०ए० में भी आशुतोष ने गोल्ड मेडल प्राप्त किया।

अब तो गौरी आशुतोष में अपना भविष्य देखने लगी। गौरी के माता–पिता अब उसकी शादी करना चाहते थे। एक दिन अवसर पाकर गौरी ने आशुतोष से कहा कि मैं तुमसे शादी करना चाहती हूँ। आशुतोष ने स्पष्ट कर दिया कि तुम्हारे परिवार के सामाजिक रुतबे को देखते हुए आज मैं इस स्थिति में नहीं हूँ कि तुम्हारे माता–पिता से तुम्हारा हाथ माँग सकूँ। आशुतोष ने कहा – ''गौरी तुम मेरी प्रेरणा हो, मेरी पथ–प्रदर्शक हो, लेकिन आज तुम मेरी मंजिल नहीं। तुम्हारे साथ रहकर मुझे अहसास हुआ है कि मेरी मंजिल तो वह रुतबा है, जो तुम्हारे परिवार को समाज में मिला हुआ है। वैसा ही मुकाम मैं अपनी मेहनत से अपने माता–पिता के लिए हासिल करना चाहता हूँ। इसलिए जहाँ तुम्हारे माता–पिता तुम्हारी

[6] अहंकार के अंकुर, पृष्ठ 65–66
[7] वही, पृष्ठ 66
[8] वही, पृष्ठ 67

शादी करना चाहते हैं, तुम वहीं शादी कर लो।''[9] यह सुनकर गौरी आशुतोष के चेहरे के भावों को पढ़ती ही रह गई। आज अनेक युवा लड़कियों के पीछे अपना जीवन बर्बाद कर देते हैं, लेकिन आशुतोष जैसा लड़का ही किसी लड़की को अपनी पथ–प्रदर्शक और प्रेरणा बना सकता है।

आज तुम्हारी बारी

इस कहानी में सत्यवीर नाम के एक व्यक्ति के माध्यम से यह दर्शाया गया है कि कैसे एक व्यक्ति समाज में व्याप्त व्यसनकारों की मंडली से स्वयं को बचाता है और कैसे अपने परिवार के प्रति अपने कर्त्तव्य का पालन करता है। शाम के समय सब्जी मंडी जाने पर सब्जी सस्ती मिल जाती है। सत्यवीर ने साइकिल ली और झोला उठाकर मंडी की तरफ निकल पड़ा। मार्ग में मोहन ने सत्यवीर को रोक लिया और सलाद का कुछ सामान लाने को कहा। जब सत्यवीर घर आकर मोहन का बताया हुआ सामान उसके घर देने गया तो वहाँ आस–पड़ौस के तीन–चार लोग और भी बैठे थे। सत्यवीर सामान देकर चलने लगा तो सभी ने सत्यवीर को कभी भी उनके पास न बैठने की शिकायत की तो उसने उनका आग्रह स्वीकार कर लिया। सत्यवीर ने शराब पीने से मना कर दिया लेकिन सभी के कहने पर उसने एक पैग ले लिया। इस घटना के दो सप्ताह बाद एक दिन फिर उस मंडली ने सत्यवीर को बुलाया। मोहन ने कहा – ''क्या बात है भाई साहब, उस दिन के बाद आज दिखाई दे रहे हो। अपनी बारी आप तो भूल ही गए।''[10] सत्यवीर ने मोहन से कहा कि मुझे तो मालूम ही नहीं था कि आप लोग शराबियों की मण्डली बनाए हुए हैं। मैं अभी कुछ देर में आता हूँ। सत्यवीर ने जाकर शराब की दुकान से एक बोतल खरीदी और कुछ खाने का सामान खरीदकर मोहन के घर पहुँचा तथा सब सामान उनको देकर चलने लगा। सबने कहा अरे भाई साहब! आप कहाँ चले? बैठेंगे नहीं? सत्यवीर ने कहा – ''मोहन जी! मैंने एक पैग की कीमत आपकी मंडली को चुका दी है। इस कीमत में मेरे घर पूरे सप्ताह भर की फल–सब्जी का खर्चा चलता है। माफ करना मैं ऐसी महफिलों का सौदागर बनकर अपने परिवार के खर्चों में कटौती नहीं कर सकता। आपकी महफिल आपको मुबारक।''[11] यह कहकर वह बोझिल कदमों से खाली थैला लेकर अपने घर की तरफ चल दिया। उसे आने वाला सप्ताह पहाड़ के समान अनुभव हो रहा था।

आगे की सोच

कहानी में रसिक लाल नाम के एम०बी०ए० पास युवक की दूरदर्शिता दिखाई गई है। यह युवक अपने कस्बे में वाटर सप्लाई का काम शुरू करना चाहता है। उसके दोस्त उसका मजाक उड़ाते हुए कहते हैं – ''अरे रसिक! अपने कस्बे में छोटे–बड़े 18 तालाब हैं, जिनमें भरपूर पानी रहता है। गर्मियों में भी पानी की किल्लत नहीं होती। तेरा यह वाटर सप्लाई वाला धंधा यहाँ नहीं चलने वाला।''[12] वह अपने मित्रों की बात से हताश नहीं हुआ और इस कार्य में निवेश करके अपने क्षेत्र के एक मंत्री जी से उद्घाटन करवा लिया। उसका यह बिजनेस कुछ ज्यादा जम नहीं पाता क्योंकि उस क्षेत्र के तालाब उसके इस काम में बाधा थे। रसिक को पता था कि मंत्री जी से कैसे काम निकलवाना है। वे मंत्री जी को अपनी समस्या बताते हैं और मंत्री की पत्नी को इस काम में हिस्सेदार बनाने की बात कहते हैं। उसने मंत्री जी के सामने प्रस्ताव रखा – ''मंत्री जी! मैं क्या कह रहा था कि, मैं बहन जी को इस कारोबार में हिस्सेदार बनाना चाहता हूँ। नजदीक ही राखी का त्यौहार भी आ रहा है, मेरी तरफ से इसे रक्षाबंधन का तोहफा समझें।''[13] कारोबार में हिस्सेदारी की बात सुनते ही मंत्री जी का राजनीतिक दिमाग दौड़ने लगा। मंत्री जी ने शहर के सौंदर्यकरण का प्रस्ताव पास करवाया जिसके तहत क्षेत्र के सभी तालाबों को पाटकर 10 बड़े–बड़े पार्क बनाने की योजना पर कार्य किया जाना था। शहर के सौंदर्यकरण की खबर सुनकर जनता भी फूली नहीं समा रही थी। मंत्री जी के बड़े–बड़े होर्डिंग लगाकर उनका धन्यवाद व्यक्त किया जा रहा था।

मुफ्त के लड्डू

इस कहानी में बताया गया है कि कुछ लोगों को मुफ्त के लड्डू खाने की आदत सी पड़ जाती है। जब बात अपने सिर पर पड़ती है तब पता चलता है कि मुफ्त के लड्डू कैसे होते हैं। कुछ वकीलों को भी अपनी जेब भरने से मतलब होता है। उन्हें दुनियादारी से कुछ लेना–देना नहीं होता। इस कहानी में मलिक साहब ऐसे ही वकील हैं। ये दोनों हाथों में लड्डू रखते हैं। मलिक साहब आजकल के

[9]देख कबीरा हँसा, पृष्ठ 33,34
[10]वही, पृष्ठ 15
[11]देख कबीरा हँसा, पृष्ठ 16
[12] वही, पृष्ठ 11
[13] वही, पृष्ठ 13

नए–नए प्रेमी–प्रेमिकाओं की कोर्ट मैरिज करवाते हैं। कुछ दिन के बाद इन आशिकों के सिर से इश्क का भूत उतर जाता है और फिर तलाक के लिए पुनः मलिक साहब की सेवा में हाजिर हो जाते हैं। क्यों हुए न मलिक साहब के दोनों हाथों में लड्डू। शादी के लिए भी वही क्लांइट और तलाक के लिए भी वही। कोर्ट में हर रोज़ लड्डू बँटते थे। आज कोर्ट में किसी और की कोर्ट मैरिज की बारी थी। आज स्मिता मैडम की कोर्ट में एक युवा जोड़ा आया हुआ है। शादी करने के लिए रंगा साहब ने मलिक साहब को कहा। मलिक साहब के आदेश पर सभी वकील मुफ्त के लड्डू खाने के लिए स्मिता मैडम की कोर्ट की तरफ चल दिए। वहाँ पहुँचकर देखा तो मलिक साहब के होश उड़ गए। उनके मुँह से निकल पड़ा –''मैडम! यह शादी मत करवाओ। यह लड़की मेरी सगी बेटी है और यह लड़का मेरे सगे भाई का बेटा है।''[14]

देख कबीरा हँसा

कबीर समाज के प्रत्येक पाखंड पर व्यंग्य करते थे। समाज का कोई भी कोना कबीर की आँखों से बचा नहीं था। इसीलिए तो कहा है 'देख कबीरा हँसा'। कहानी में केशव नाम के व्यक्ति ने बाजार में चारों तरफ अपनी नज़र घुमाई किन्तु कहीं भी मोटर साइकिल खड़ी करने की जगह नज़र नहीं आई। बाज़ार में भीड़ ही इतनी थी। कहीं भी रास्ता नहीं बचा था। एक गली में एक घर का दरवाजा ऐसा था, जिसके सामने कोई वाहन नहीं खड़ा था। केशव ने वहीं अपनी मोटरसाइकिल खड़ी कर दी। सभी दुकानदार केशन को जानते थे। उसने सबको नमस्कार किया और वहाँ से चला गया। केशव के जाने के बाद सभी खुसर–फुसर करने लगे कि आज फिर तमाशा देखने को मिलेगा क्योंकि यह आदमी किसी को भी अपने घर के सामने वाहन खड़ा नहीं करने देता।

केशव अपने सभी काम निपटाकर मोटरसाइकिल के पास पहुँचा। वह आदमी बड़े गुस्से में इधर–उधर टहल रहा था। केशव ने बड़ी विनम्रता से उसे प्रणाम किया। वे दोनों आपस में 10 मिनट तक बातें करते रहे। कुछ देर बाद वह आदमी हाथ जोड़कर अपने घर के अन्दर चला गया। उसके जाते ही दुकानदारों ने केशव को घेर लिया। इस आदमी का वाहन खड़ा करने को लेकर अनेक लोगों से झगड़ा हो चुका है लेकिन तुम बच गए, यह कैसे हुआ केशव? केशव ने कहा – ''झगड़ा तो हमारा भी हो जाता, अगर मैं भी उनसे अकड़कर बात करता। मुझसे गलती हुई थी, तो मैंने माफी माँगने में शर्म नहीं की। इससे उसके मन में मेरे लिए आदर भाव भी बढ़ा।''[15] तभी तो कबीरदास जी ने कहा है –

''ऐसी बाणी बोलिए, मन का आपा खोय।
औरन को शीतल करे, आपहि शीतल होय।।''

मीठी वाणी से समस्त कार्य सफल हो जाते हैं, दूसरों को अपने वश में किया जा सकता है।

निष्कर्ष

विजय 'विभोर' की कहानियाँ आकार में भले ही छोटी हों, लेकिन बात बड़ी कह जाती हैं। उन्होंने अपनी कहानियों में परिवार से लेकर समाज तक के सरोकारों को उजागर किया है। यह भी चित्रित किया गया है कि जो सरोकार ईमानदारी से निभाए जाते हैं, वे परिवार और समाज को व्यवस्थित रूप से चलाते हैं। 'विभोर' जी की कहानियों में समाज की लगभग सभी समस्याओं को उजागर किया गया है। इनकी कहानियों में उन समस्याओं को उठाया गया है, जिन्हें समाज अनदेखा कर देता है। समाज या परिवार में कहीं भी किसी का शोषण होता है तो इस बात का पूरा समाज जिम्मेदार है न कि एक व्यक्ति। अन्याय तभी होता है जब कोई आवाज नहीं उठाता। कहा जा सकता है कि कहानियाँ समाज में ही उत्पन्न होती हैं और इनके माध्यम से किसी समस्या को ही दिखाया जाता है। वहीं आस–पास ही समस्या का समाधान भी होता है। 'विभोर' जी ने सामाजिक बारीकियों को पहचाना है और बताया है कि समस्याएँ कैसे उत्पन्न होती हैं और उनका समाधान कैसे किया जा सकता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1 विजय 'विभोर', अहंकार के अंकुर, प्रकाशक रवीना प्रकाशन, दिल्ली, 2019
2 विजय 'विभोर', देख कबीरा हँसा, प्रकाशक रवीना प्रकाशन, दिल्ली, 2019

[14] देख कबीरा हँसा, पृष्ठ 67

[15] देख कबीरा हँसा, पृष्ठ 36